ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-1, No.-1, PP-203-207,YEAR-2013

स्वाधीन चेतना की अभिव्यक्ति और छायावाद

❑ डॉ0 मुन्ना तिवारी

छायावाद हिंदी साहित्य की अत्यंत समृद्ध, सौंदर्यशालिनी, सशक्त एवं कलात्मक काव्यधारा रही है। यह अनुभूति और अभिव्यक्ति सौंदर्य के संगम का काव्य है। छायावादी कवियों ने प्रकृति सौंदर्य और नारी सौंदर्य का अंकन बड़े ही मनोयोग के साथ किया है। इन कवियों ने प्रकृति को प्रायः सच्चे सौंदर्य का प्रतिमान माना है। डॉ0 कुमार विमल के अनुसार 'छायावादी कवियों ने प्रकृति सौंदर्य को तीन माध्यमों से उपस्थित किया है। चित्रधर्मी निसर्ग–वर्णन द्वारा अंकित प्रकृति सौंदर्य, भावधर्मी निसर्ग वर्णन द्वारा अंकित प्रकृति सौंदर्य और संगीतधर्मी निसर्ग वर्णन द्वारा अंकित प्रकृति सौंदर्य।' अर्थात् इस प्रकृति सौंदर्य में चित्रात्मकता भावात्मकता और संगीतात्मकता का समन्वय रहा है। साथ ही प्रकृति सौंदर्य और नारी सौंदर्य के मध्य एक तादात्म्य दृष्टि रहने के कारण इन कवियों ने प्रायः प्रकृति सौंदर्य पर नारी के रूप और क्रिया–व्यापारों का आरोप कर दिया है। इसी प्रकार प्रसाद ने 'कामायनी' में तथा निराला ने 'परिमल' में 'बहू','यामिनी' आदि कविताओं में नारी रूप पर प्रकृति सौंदर्य का आरोप किया है। इस सम्मिश्रण से नारी सौंदर्य को रमणीय सूक्ष्मता मिल गयी तथा सौंदर्य को एक कलात्मक मूर्तता। सौंदर्य के प्रति सूक्ष्म तथा आध्यात्मिक दृष्टि के कारण सौंदर्य चेतना के विकास में एक ऐसी स्थिति आती है, जब सौंदर्य चेतना का पर्यवसान मुक्ति–प्रसार में हो जाता है अर्थात् लघु और विराट सब कुछ उसी सौंदर्य द्वारा अभिभूत दर्शित होने लगता है। छायावादी कविता में सौंदर्य चेतना का यह 'मुक्ति–प्रसार' प्रभूत मात्रा में उपलब्ध है।' अतः कतिपय आलोचकों ने छायावादी कविता को सौंदर्य चेतना के मुक्ति–प्रसार–युग की कविता कहा है। छायावाद के चतुष्टम् कवियों की सौंदर्य चेतना की अपनी निजी विशेषता है।

प्रसाद ने सौंदर्य को मनोमय लोक में देखा। अतः उनकी सौंदर्य दृष्टि में स्थूलता तथा ऐंद्रियता का उन्नयन मिलता है। निराला की सौंदर्य चेतना में कल्पना विलास अपेक्षाकृत कम है। उनकी सौंदर्य चेतना में तथ्यग्राही बुद्धितत्व और वस्तुनिश्ठता विद्यमान है। पंत की सौंदर्य चेतना विकासशील रही है। आरंभ में उसमें ऐंद्रियता दर्शित होती है, किंतु परवर्ती कविताओं में उर्ध्वमुखी सौंदर्य कल्पना विश्व कल्याण की भावना को अभिव्यक्त करने के लिए मांगलिक उपादान बन गयी। महादेवी वर्मा को सौंदर्य चेतना सूक्ष्म है। उनके अनुसार सौंदर्यानुभूति सदैव रहस्यात्मक होती है क्योंकि सौंदर्य का प्रत्येक दिग्दर्शन अंतः जगत के अखंड और विराट सौंदर्य का प्रतिबिंब हुआ करता है। सूक्ष्म सौंदर्य की प्रतिष्ठा को वह छायावाद की सबसे बड़ी उपलब्धि मानती है।

छायावादी कविता में सबसे प्रमुख तत्त्व वैयक्तिकता है जिसने रचनाकार को अन्तः और बाह्य तमाम तरह की रूढ़ियों से मुक्ति की प्रेरणा दी, जिसके कारण वह मध्ययुगीन सामन्ती रूढ़ियों से मुक्त होकर व्यक्तित्व के स्वतन्त्र विकास के लिए प्रयासरत हुआ। मैं शैली का प्रयोग, आत्माभिव्यक्ति के लिए आत्मकथा की प्रवृत्ति, आत्म–प्रसार की आकांक्षा में जीवन के सभी क्षेत्रों में संकीर्णता का विरोध, प्रकृति से प्रेम तथा विराट् से जुड़ाव आदि छायावादी काव्य–प्रवृत्तियाँ व्यक्ति–स्वातन्त्र्य को ही मुखरित करती हैं। इनसे छायावादी कवियों का मानसिक क्षितिज विस्तृत हुआ है। इनका प्रिय प्रतीक 'निर्झर' तथा 'प्रपात' इसी बात को प्रमाणित करता है जिसमें व्यक्ति

सह आचार्य, हिन्दी विभाग, श्री भगवान महावीर पी.जी. कॉलेज, पावानगर, फाजिलनगर, कुशीनगर (उ0प्र0), भारत

की उद्दाम मुक्ति–कामना का संकेत है। यही नहीं, घर छोड़ वन–वन भटकने वाले व्यक्ति की व्याकुल मनःस्थिति के प्रतीक रूप में 'पथिक' शब्द का प्रयोग उनमें अधिकाधिक हुआ है जिसमें वैयक्तिकता के आग्रह के साथ व्यक्ति के आत्मप्रसार की आकांक्षा द्योतित हुई है। व्यापक अर्थ में स्वातन्त्र्य ही इन कवियों का केन्द्रीय मूल्य है –''छायावादी कवियों के सामने आत्ममुक्ति की धारणा तुच्छ होकर भावमुक्ति, मानवमुक्ति, विश्वमुक्ति तथा लोकमुक्ति की सम्भावना अनेक मूल्यों, विचारों तथा भावनाओं में रूप धरकर, उनकी वाणी द्वारा स्वप्नमूर्त होने का प्रयत्न कर रही थी।''[2]

अर्थात् छायावादी काव्य अपने ऐतिहासिक सन्दर्भ तथा राष्ट्रीय परिवेश के अनुरूप मुक्ति की आकांक्षा की अभिव्यक्ति का काव्य था। छायावादी कवियों ने 'वस्तु' के स्थान पर 'व्यक्ति' तथा 'विषय' के 'विषयी' को महत्त्व दिया है। उनके प्रकृति–चित्रण में विषयिनिष्ठता स्पष्ट रूप में लक्षित की जा सकती है, जहाँ जड़ प्रकृति पर चेतना का आरोप है या मानवीकरण की प्रवृत्ति है। मुक्तिकामी छायावादी कवि प्रकृति के उन्मुक्त और स्वच्छन्द रूप के प्रति आकृष्ट हो प्रकृति से जुड़ा है। ''प्रकृति–दर्शन से छायावादी कवि को यह जो नया आलोक मिला, उसने सामान्य रूप से उसकी सम्पूर्ण जीवन–दृष्टि बदल दी और विशेष रूप से प्रकृति सम्बन्धी सौंदर्य दृष्टि।''[3] पन्त की 'प्रथम रश्मि', निराला की 'संध्या सुन्दरी' तथा प्रसाद की 'मंदिर माधव यामिनी'–प्रकृति के ऐसे ही सुन्दर और भव्य चित्र हैं, जिसमें छायावादी कवियों की नवीन अन्तर्दृष्टि के साथ उनके सूक्ष्म और नवीन सौन्दर्य–बोध का भी परिचय मिलता है।

कहना तो यह चाहिए सौंदर्य–बोध छायावादी कवियों की सबसे अधिक मौलिक तथा प्रमुख देन रही। वे प्रकृति–सौन्दर्य से चलकर मानव–सौंदर्य तक पहुंचे थे– 'सुन्दर है विहग सुमन सुन्दर मानव तुम सबसे सुन्दरतम्।' (पन्त) इन कवियों ने ''सौन्दर्य को उदात्तता, भव्यता तथा दिव्यता आदि गुणों से मण्डित करके उसे काव्य में एक नए मूल्य के रूप में प्रतिश्ठित किया।''[4]

अखिल विश्व के चराचर के सौंदर्य–चित्रण में ही इन कवियों ने कल्पना की ऊँची–ऊँची उड़ाने भरी। इन कवियों के लिए कल्पना उनकी मानसिक स्वतंत्रता का प्रतीक थी, जिनसे उन्होंने अपने विचारों और भावों का अबाध प्रसार किया है। तभी तो इन कवियों ने कल्पना का मुक्त कण्ठ से गुणगान भी किया है। निराला कविता को 'कल्पना के कानन की रानी' कहते हैं, प्रसाद कल्पना की प्रशंसा में एक कविता ही 'हे कल्पना सुखदान' लिख डालते हैं तो पन्त अपने 'पल्लव' को 'कल्पना के ये विह्वल बाल' नाम देते हैं।

''कल्पना छायावादी कवि के मन की पाँख थी, वह उसकी स्वतन्त्रता, मुक्ति विद्रोह, आनन्द आदि की आकांक्षाओं की प्रतीक थी। अन्तर्दृष्टियामिनी कल्पना और जीवन शक्तिदायिनी कल्पना–इन दोनों की सुन्दर अभिव्यंजना छायावादी काव्य में हुई है।''[5]

रामविलास शर्मा ने भी लिखा है–छायावाद में दो तरह की प्रवृत्तियाँ मौजूद हैं– एक काल्पनिक इच्छा–पूर्ति के सपने रचने की, दूसरी वास्तविक जीवन–संघर्ष को चित्रित करने की।[6]

छायावादी कवियों ने मूलतः नारी–सौंदर्य और प्रेम के चित्रण में, प्रकृति–सौन्दर्य और प्रेम की व्यंजना में तथा अलौकिक प्रेम या रहस्यवाद के निरूपण में कल्पना के रंग भरे हैं। जहाँ तक नारी–सौंदर्य के चित्रण की बात है, छायावादी कवियों को नारी का प्रेयसी रूप बहुत भाया है। 'प्रेयसी','प्रिये', 'प्रियतमे','सखि','सजनी' जैसे सम्बोधन छायावादी कविताओं में अनेक स्थलों पर किये गये हैं। वस्तुतः छायावादी कवियों ने नारी के प्रेयसी रूप को महिमा–मण्डित किया है और ऐसा हिन्दी कविता छायावादी कवि ने एक ही क्षेत्र में नारी को जो महिमा प्रदान की, वह स्तुत्य है। श्रद्धामयी, करूणामयी, कल्याणी, कलामयी तथा प्रेममयी जीवन–सहचरी नारी का चित्रण करके छायावादी कवियों ने समाज और साहित्य को अभिनव जीवन–रस से सींच दिया।''[7]

''छायावादी कवि ने नारी की पुनः सृष्टि की। उसने विधाता की सृष्टि को अपनी कल्पना के योग से नवीन रूप दे डाला, इस तरह छायावादी कवि की नारी विधाता की सृष्टि से कहीं अधिक

कवि–सृष्टि है।.........उसके सामने पुराने कवियों की रूढ़ उपमाओं से अलंकृत नारी तुच्छ है।"[8]

कहना चाहिए छायावाद में स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों में नवीन नैतिकता (प्रेम–प्रधान) प्रतिष्ठित हुई है। पन्तजी की 'उच्छ्वास','आँसू' तथा 'ग्रन्थि' में, प्रसादजी के 'कामायनी' में, निरालाजी के 'प्रेम के प्रति','रेखा' तथा 'प्रेयसी' में एवं महादेवी के गीतों में प्रेम का सूक्ष्म, सुसंस्कृत तथा उदात्त रूप वर्णित हुआ है। स्वच्छन्दता, भाव प्रधानता, वैयक्तिकता, मार्मिकता, सूक्ष्मता तथा उदात्तता छायावादी कवियों के प्रेम–निरूपण की कतिपय विशेषताएँ रही हैं। प्रेम–चित्रण में विरहानुभूतियों की व्यंजना में वे ज्यादा सफल रहे हैं, उनमें मिलन की अनुभूतियाँ कम, विरह का रूदन ज्यादा है। 'उमड़ कर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान' (पन्त), 'जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति सी छायी। दुर्दिन में आँसू बनकर वह आज बरसने आई' ।। (प्रसाद), दुःख ही जीवन की कथा रही' (निराला) तथा 'वेदना में जन्म करूणा में मिला आवास' (महादेवी) आदि में वेदना की विवृत्ति ही हुई है।

"बहुत सारी वेदना की अनुभूति उस युग के भावप्रवण मन में इसलिए भी थी कि वह उन श्रृंखला की कड़ियों के प्रति जाग्रत् था जो समस्त देश तथा समाज की चेतना को अपने दुर्निवार, निर्मम, नृशंस लौह–बन्धनों में जकड़े हुए थी और जिन्हें तोड़ने के लिए प्रबुद्ध सामूहिक कर्म तथा संयुक्त सामाजिक संघर्श करना आवश्यक तथा अनिवार्य था। नए युग के भाव–मुक्तिकामी मन के उड़ान भरनेवाले, जिंजरबद्ध व्यक्ति असमर्थ पंख उन जीवनशून्य ठण्डे सींकचों के सम्पर्क के कठोर आघात से लहूलुहान होकर कराहती हुई वेतना के स्वरों में गा उठे थे।"[9]

कल्पना छायावादी कविता का मेरूदंड है। प्रसाद के विचार से कल्पना की शक्ति द्वारा ही कविगण काव्य जगत् में अद्‌भूत क्रीड़ा किया करते है। 'बोलूँ अल्प न करूँ कल्पना, सत्य रहे मिट जाय कल्पना' के अनुसार निराला ने कल्पना को सत्य की सहचरी माना है। उनके अनुसार कल्पना कभी निर्मूल नहीं होती है उसमें भी सत्य की झलक रहती है। कल्पना पंत की काव्य–सृष्टि का 'मापदंड' है। इस संबंध में उनके विचार हैं– 'मेरी कल्पना को जिन–जिन विचारधाओं से प्रेरणा मिली है, उन सबका समीकरण करने की मैंने चेश्टा की है। मेरा विचार है कि वीणा से लेकर ग्राम्या तक अपनी सभी रचनाओं में मैंने अपनी कल्पना ही को वाणी दी है।' महादेवी कल्पना में केवल सौंदर्य ही नहीं वास्तविकता की भी प्रतिष्ठा चाहती हैं। उनके अनुसार–'कलाकार यदि सत्य अर्थों में कलाकार हो तो वह कल्पना को सौंदर्यमय आकार देगा, उसमें वास्तविकता का रंग भरेगा और उससे जीवन–संगीत की सुरीली लय की सृष्टि कर लेगा।'[10]

छायावादी कवि प्रकृति के माध्यम से कल्पना–लोक के निर्माण में प्रवृत्त हुए। अतः इसे प्रकृति काव्य भी कहा गया है। छायावाद और प्रकृति का अन्योन्याश्रित संबंध रहा है। इस काव्य में प्रकृति कवि की भाव भावनाओं से स्पंदित होने के कारण सजीव तथा सप्राण हो गयी है। प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी के काव्य–कानन में प्रकृति नटी को स्वच्छंद विचरण करने का अवसर मिला। प्रकृति में रूप की स्थापना के साथ वस्तु और भाव दोनों का सम्मिश्रण इन कवियों के द्वारा हुआ और प्रकृति को सापेक्ष दृष्टि से न देखकर स्वतंत्र और निरपेक्ष दृष्टि से देखना ही श्रेयस्कर समझा जाने लगा। प्रकृति के प्रति वह स्वस्थ दृश्टिकोण हिंदी कविता में व्यापकता लाने के कारण बना है।

छायावादी काव्य आत्मपरक रहा है। आत्माभिव्यक्ति इस काव्य की महत्वपूर्ण शक्ति है। कवि की अंतर्मुखी वृत्ति ने वैयक्तिक स्तर पर स्वानुभूत भावनाओं को काव्य में वाणी दी है। किंतु यह स्वानुभूति केवल वैयक्तिक सुख–दुख, हर्ष–विशाद का प्रलाप मात्र नहीं है। अनेक सामाजिक और राजनीतिक बंधनों में आकुल जनों के ह्रदय की झंकार भी इसमें सुनायी देती है। इस स्वानुभूति पंत के प्रति छटपटाहट और स्वच्छन्दता के प्रति आग्रह है। अतः यह स्वानुभूति पंत के विचार से मूल्यनिष्ठ या मूल्यकेन्द्रित है। इनमें सार्वभौमिकता एवं मानवता के चिरंतन मूल्यों के प्रति आग्रह अधिक है। इस स्वानुभूति का अधिकांश कवि के वैयक्तिक सुख–दुःख से उद्‌भूत होने के कारण

इसमें सूक्ष्मता तथा भावुकता निहित है। प्रसाद ने 'आंसू' में वियोग–विगलित ह्रदय से प्रस्फुटित अश्रुसिक्त पंक्तियां लिखी हैं। पंत 'ग्रंथि' में अपने मन की गांठ खोलकर रख दी है। निराला ने 'स्नेह निर्झर बह गया है' तथा 'सरोज–स्मृति' आदि कविताओं में दुःखपूर्ण जीवन की कथा प्रकट की है। महादेवी ने 'विस्तृत नभ का कोई कोना, मेरा न कभी अपना होना' के रूप में वेदना के संसार को विविध रंगों में रंग कर अंकित किया है। इन कवियों के गंभीर, गहन व्यक्तित्व, चिंतनशीलता तथा परिश्कृत सौंदर्यबोध के कारण यह काव्य श्रेयमयी प्रेय स्वानुभूति की अभिव्यक्ति है।[11]

भारतीय इतिहास और दर्शन पर आधारित कामायनी मानवता के ऐतिहासिक विकास की कथा का महाकाव्य है। प्रसाद ने इसमें जीवन की दुश्प्रवृत्तियों–विलास, स्वार्थ, अंहकार, अनास्था आदि–का विष्लेशण कर समरसता और सामंजस्य की भावना से इच्छा, क्रिया, ज्ञान के संतुलन से मानव मात्र को आनंदमय सत् पथ की ओर ले जाने का अद्भुत उपक्रम किया है। कामायनी एकांगी, अव्यावहारिक रूढ़ि के स्थान पर व्यापक और बहुमुखी जीवन–दृष्टि का संदेश सुनाती है। इसमें नर–नारी व्यक्तिशासित, बुद्धि–भावना, यथार्थ–आदर्श, भौतिकता–आध्यात्मिकता, शासक–शासित, धर्म और मोक्ष का शाश्वत सामंजस्य निर्दिश्ट किया है। विश्वमैत्री तथा विश्वप्रेम कामायनी का संदेश है।[12]

समग्रतः छायावादी काव्य समृद्ध काव्य है। उसने हिन्दी साहित्य को भव्य बनाया है। उसकी कान्ति और दीप्ति अनुपम है। कुछ शैलीगत दोश–यथा, कल्पना की क्लिश्टता उपमानों का अस्वाभाविक प्रयोग, अशुद्ध प्रयोग तथा अस्पश्टता इनमें जरूर मिलती है किन्तु हम निस्संकोच कह सकते हैं कि छायावादी कवियों के कारण हिन्दी की अभिव्यंजना–शक्ति अत्यन्त विकसित हुई है। कुल मिलाकर छायावादी काव्य वैयक्तिक, सामाजिक, राश्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय हित–चिन्तन के साथ कल्पना तूलिका के द्वारा बिम्ब, प्रतीक एवं लाक्षणिक प्रयोग तथा नूतन अलंकरण प्रद्धति की योजना से अपने भाव–विधान में कई सुन्दर चित्रकारी तो की ही है, अपनी खड़ी बोली भाषा को भी कलात्मक उत्कर्श पर पहुँचाया है जिससे आधुनिक हिन्दी साहित्य प्रखर भासमान तथा उन्नत हुआ है जिस पर हमें गर्व है।[13] कुछ उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं –

किसी ह्रदय का यह विशाद है
छेड़ो मत यह सुख का कण है
उत्तेजित कर मत दौड़ाओं
करूणा का विश्रान्त चरण है।

जिस तरह छायावाद युग की चरम आस्था यह है कि अन्तर्जगत् का सत्य और बहिर्जगत् का सत्य एक ही है और दोनों में कभी भी व्यवधान नहीं पैदा हो सकता, उसी तरह उसकी मान्यता की दूसरी आधारशिला यह है कि नैतिक विजन और कल्पनाशील विजन दोनों वस्तुतः एक हैं और इन दोनों में कभी भी दरार नहीं पड़ सकती। इस प्रकार महत् की महत्ता में एक अभूतपूर्व सहज आकर्षण शक्ति–उत्पन्न हो जाती है। राश्ट्रीय संघर्श के स्तर पर नैतिक और कल्पनाजन्य महत्ताएँ राष्ट्रीय नेतृत्व की महत्ता में घुल–मिलकर एकाकार हो जाती हैं। छायावाद की हर रचना एक ही साथ नैतिक भी है, कल्पनात्मक भी है और राजनीतिक भी है। इससे काव्य में अर्थ और लय की गूँज–अनुगुँज की सम्भावना बहुत बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए प्रसाद का 'बीती विभावरी जाग री' या निराला का 'राम की शक्तिपूजा' का पन्त का 'धूम धुँआरे काजर कारे' या महादेवी का 'जाग तुझको दूर जाना'........एक साथ नैतिक, कल्पनात्मक और राजनीतिक स्तरों पर झंकृत होता है। यही दशा प्रेमचन्द के उपन्यासों की, विशेषतः 'रंगभूमि' और 'कर्मभूमि' की है। लेकिन नैतिक और कल्पनात्मक तत्त्वों की यह मैत्री अपने सम्मिलित बोझ को एक ही झंकार में बहुत दूर तक नहीं संभाल पा रही हैं, इसका संकेत तो प्रसाद–प्रेमचन्द कटाक्षगाथा में ही मिलने लगता है। पछुआ और पुरवैया दोनों मिलाकर कब तक आशाढ़ का पहला दिन रहेगा ? ये अनुभूतियाँ, खण्डित भी, हुई, और उन्हें फिर से समन्वित करने का प्रयास भी आज हो रहा है, लेकिन इस बीच में मनुश्य की परिभाषा–या यों कहें कि सहज मनुष्य की परिभाषा–को बदल देने की जरूरत पैदा हो

गई। एक नया समन्वय नये स्तर पर ही सम्भव हो सकता है।[14]

दार्शनिक मुद्रा, विराट् नाटकीयता, और नैतिक तथा कल्पनात्मक स्वप्नलोकों का विशिष्ट अनुपात में सम्मिश्रण, इन तीनों तत्त्वों के अतिरिक्त दो अन्य तत्त्व भी हैं जो उस युग की मनोभूमि का निर्माण करते हैं। ये दोनों हिन्दी की जिस भाषा को काव्य–मुखर करने का संकल्प, छायावाद–युग ने किया था, उसे अपना तोतलापन छोड़े हुए बहुत दिन नहीं हुए थे। ब्रजभाशा और उर्दू, दोनों ही से समान विद्रोह करके ही इस साहित्य का जन्म हो रहा था। दूसरे, हिन्दी का स्वयम् का एक 'संसार' था। यह 'संसार' इस रूप में समूचे भारत से छोटा था कि हिन्दी का साहित्य भारत का एकमात्र साहित्य नहीं था। इसमें तो हिन्दी का 'संसारत्व' अन्य भाषाओं से कुछ अधिक कठिन दबाव महसूस कर रहा था। स्वयम् हिन्दी भाषी प्रदेश में हिन्दी के अतिरिक्त दो सांस्कृतिक 'संसार' और थे : एक तो उर्दू का, और दूसरा अंग्रेजी शिक्षितों या रूचि–सम्पन्नों का। ये दोनों 'संसार' समाज के शासक वर्ग में से थे और इनका 'प्रेशर' हिन्दी के विरूद्ध ही पड़ता था। यह ऐसी स्थिति थी जो बंगाली, मराठी या तमिल में नहीं थी। ये दोनों ही तत्त्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं और इनका प्रभाव हिन्दी की मनोभूमि पर क्या पड़ा, यह अलग विश्लेशण का विशय है। आशा है इस ओर आलोचकों का ध्यान जाएगा। हमारे सामने जो प्रश्न है, उसमें हम इतना नतीजा जोड़ सकते हैं कि इनमें से पहला तत्त्व–भाशा की समस्या, जो मूलतः एक टेकनिकल समस्या है–संस्कृत शब्दावली के माध्यम से मनोभूमि को क्लासिकल और ऐब्स्ट्रैक्ट बनाती है, दूसरा तत्त्व–हिन्दी के संसारत्व की सीमा–उस 'विद्रोही' स्वर को जन्म देता है जो उसे रोमांटिसिज्म के निकट लाता है। कुल मिलाकर पूरे देश की अनुभूति के समस्त उतार–चढ़ावों को ग्रहण करने और भाशा में व्यक्त करने की क्षमता में कमी आती है। प्रौढ़ भाषा की अवस्था में उस समय की अनुभूति की अभिव्यक्ति ज्यादा सूक्ष्म, ज्यादा विविध, ज्यादा जटिल होती और इतना अधिक ऊबड़–खाबड़ रिक्त स्थान भी न छूटता। जैसी स्थिति है, उसमें अनुभूति के सरलीकरण की प्रवृति अधिक है – जटिलता और विविधता अपरिचित और अजनबी मालूम पड़ती है। आज जब हिन्दी का पाट बहुत बढ़ गया है, तब भी हिन्दी के लेखकों ने 'विरादरीपन' का अभाव खटकने की शिकायत कभी–कभी सुनाई पड़ जाती है। हिन्दी का 'संसारत्व' अभी भी पूरी तरह नहीं टूटा है। कहने को मनोभूमि 'आधुनिक' हो गई है। नयी कविता की तथाकथित 'आधुनिकता' में हिन्दी के 'संसारत्व' का दबाव कौन–कौन से म्यूटेशन्स' (संशोधन) पैदा करता है ? जहाँ तक छायावाद का सवाल है, उसने एक तरह की शिशुआस्था का आयाम थोड़ा जो ऐब्स्ट्रैक्ट संस्कृत शब्दावली से पुश्ट हो गया।[15]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शुभदा वांजपे–छायावाद दर्पण पृ0–315.
2. सुमित्रानन्द पन्त–छायावाद पुनर्मूल्यांकन।
3. नामवर सिंह– छायावाद पृ0–37.
4. रामकुमार वर्मा– हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (दसवां भाग) पृ0–140.
5. नामवर सिंह– छायावाद पृ0–31.
6. रामविलास शर्मा– निराला की साहित्य साधना भाग–दो पृ0–462.
7. नामवर सिंह – छायावाद पृ0–67.
8. उपरिवत–पृ0–62.
9. सुमित्रानन्दन पंत– छायावाद पुनर्मूल्यांकन।
10. शुभदावांजपे– छायावाद दर्पण पृ0–316.
11. उपरिवत–पृ0–316.
12. उपरिवत–पृ0–317.
13. डॉ0 कुसुम राय–हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास पृ0–47.
14. विजयदेव नारायण शाही निबंधों की दुनिया पृ0–96.
15. उपरिवत्– पृ0–97.

*****